# भारत की आर्थिक सुधारों की पूर्व पिठिका

-पंकज

**1991 के पहले वाला समय भी दरअसल पूंजीपति वर्ग का ही शासन काल था जिसमें उसको फलने-फूलने का मौका दिया गया और फ़िर अवसर आते ही सब कुछ उसके हवाले किया जाने लगा। और मध्यम वर्ग को भी इसमें अपनी तरफ़ मिलाने के लिये उसने मध्यम वर्ग को उपभोक्ता सामग्री के समुद्र में तैरने के लिए छोड़ दिया।**

भारत में आर्थिक सुधारों में एक क्रांतिकारी कदम 1991 में तत्कालीन प्रधानमंत्री पी.वी.नरसिम्हराव व वित्तमंत्री मनमोहन सिंह के समय से माना जाता है। 1991 के बाद तेज़ी से मध्यम वर्ग व पूंजीपरस्त नीतियों को लागू किया गया। एक ओर जहां पूंजीपतियों को मज़दूरों व आम मेहनतकशों को चूसने का मौका मिला वहीं मध्यम वर्ग के लिए एक उपभोक्तावादी वातावरण तैयार किया गया। और फ़िर इन नीतियों के परिणामस्वरूप जब आम मेहनतकश वर्ग की जिंदगी बदहाल होने लगी तो कुछ बुद्धिजीवी 1991 से पहले वाले काल को याद करते हुए आहें भरने लगे तथा उसके वापस आने की बात करने लगे। इंदिरा गांधी जैसे तानाशाह शासक की गरीबी दूर करने की बातें, उसे याद आने लगी।

परन्तु 1991 से पहले वाले समय 1970 के बाद का समय देखें तो हम पायेंगे कि उस समय भी पूंजीपतियों व मध्यम वर्ग से सम्बन्धित नीतियां वहां बनायी जाने लगीं थीं जिनकी चरम परिणति 1991 के आर्थिक सुधारों में हुई। गरीबों के लिये तब भी केवल नारे ही थे जो कभी भी उनकी गरीबी दूर न कर सके। इसे हम कई पक्षों से देख सकते हैं।

अगर हम प्रत्यक्ष करों से संबंधित बात करें तो हम पाते हैं कि 1970 के शुरूआती काल तक आय कर 97 प्रतिशत होते थे। 1980 में जब इंदिरा गांधी की सरकार दुबारा सत्ता में आयी तो उसने धीरे-धीरे करों की दर कम की, आय कर से छूट संबंधी सीमा बढ़ायी। जहां उसने कर छूट योग्य आय की सीमा 10 हजार से 15 हजार की तो वहीं अधिभार को 20 प्रतिशत से घटाकर 12.5 प्रतिशत कर दिया। वेल्थ टैक्स पर सीमा 1 लाख से बढ़ाकर 1.5 लाख कर दी। राजीव गांधी ने भी इंदिरा गांधी के कदमों पर चलते हुए 1985-86 के बजट में टैक्स दरों में 25 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक की कमी की तथा कर स्लेबों की संख्या 8 से घटाकर 4 कर दी। उस समय वित्त मंत्री वी.पी. सिंह थे। वी.पी. सिंह ने आवश्यक बचत करने के नियम को भी हटा दिया। और राजीव गांधी ने हाउसिंग सेक्टर में बचत लगाने पर विशेष प्रोत्साहन दिया। करों में छूट की यह सीमा 1991 के बाद से अब तक लगातार जारी है। इसके साथ ही पूंजीपतियों पर लगने वाले टैक्सों में राजीव गांधी ने 1986 में ही कमी करनी शुरू कर दी। तथा उन्हें 50-55 प्रतिशत तक ले आया गया।

वहीं हम सरकार द्वारा उपभोक्ता सामग्री को बढावा देने के पक्ष से बात करें तो चाहे वह इंदिरा गांधी की सरकार हो या राजीव गांधी की या फ़िर संयुक्त मोर्चे की,सभी सरकारों ने मध्यम वर्ग को ध्यान में रखते हुए उपभोक्ता सामग्री को बाजार में उपलब्ध करवाया। टूथपेस्ट, साबुन, प्रेशर कुकर, इलेक्ट्रोनिक सामान आदि पर एक्साइज ड्यूटी कम की गयी तो वहीं फ्रीज, कलर टीवी, कार, मोटर स्कूटर आदि के आयात पर ड्यूटी कम की गयी। 1982 में दिल्ली में एशियन गेम्स के आयोजन में भारी मात्रा में कलर टीवी का आयात किया गया। 1980 के दौरान फ्रिज के उपभोग में 361 प्रतिशत, मोटर स्कूटर में 1,102.8 प्रतिशत, कारों में 412.3 प्रतिशत तथा हाथ घड़ी में 145.4 प्रतिशत की वृद्धि देखी गयी। साथ ही ट्रेवल टिकट में कमी तथा हवाई जहाज के ईंधन में टैक्सों में कमी की गयी।

पूंजीपतियों के लिये सिरदर्द बने लाइसेन्स राज का खात्मा वैसे तो 1991 के बाद ही सही रूप से हो गया लेकिन जुलाई 1980 में बनी औद्योगिक नीति में इंदिरा गांधी ने 25 प्रतिशत तक विस्तार (तय उत्पादन सीमा से अधिक) करने की छूट पूंजीपतियों को दी और राजीव गांधी ने तो इसकी सीमा 133 प्रतिशत तक बढ़ा दी। निर्यात केन्द्रित उद्योगों के लिये तो उसने और ज़्यादा छूटें दीं। इसके अलावा बहुत सारे क्षेत्र जो पहले केवल सार्वजनिक क्षेत्र के लिये ही थे उनको अब पूंजीपतियों के लिये खोला जाने लगा। जैसे-सीमेण्ट उद्योग को 1982 में व संचार उपकरण वाले क्षेत्र को 1984 में पूंजीपतियों के लिये खोला गया। इसके साथ ही भले ही इंदिरा गांधी ने बैंकों का निजीकरण कर दिया लेकिन धीरे-धीरे उसने पूंजीपतियों को बैंकों से पैसा देने की मात्रा को बढ़ा दिया। और इस तरह जनता की गाढ़ी कमाई को पूंजीपतियों को दिया गया ताकि वह मेहनतकश जनता के पैसों से उन्हीं का शोषण कर सकें।

1991 के बाद से हम पाते हैं कि देश के अंदर विदेशी पूंजी निवेश बढ़ा और कई सारी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों ने यहां निवेश किया लेकिन इसकी पटकथा तो राजीव गांधी के समय से ही तय हो गयी थी। इसका उदाहरण हम भोपाल गैस कांड के दौरान देखते हैं। जब 1984 में भोपाल गैस कांड हुआ तब यूनियन कार्बाइड (जिस फैक्ट्री में यह हादसा हुआ था) के चेयरमेन वारेन एण्डरसेन को मध्यप्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री अर्जुन सिंह और प्रधानमंत्री राजीव गांधी के संरक्षण में अमेरिका भेज दिया गया। यह वह कदम था जिसके द्वारा देशी-विदेशी पूंजी को यह संकेत दिया गया कि उसकी पूंजी भारत में सुरक्षित है चाहे वह श्रम कानूनों का कितना ही उल्लंघन करे चाहे कितने ही मेहनतकशों की बलि उसमें देनी पड़े।

इसके साथ ही सरकार में उन व्यक्तियों की नियुक्ति इंदिरा गांधी व राजीव गांधी के समय से ही होनी शुरू हो गयी थी जो आज उदारीकरण व्यवस्था के सिरमौर बने हुए हैं। इनमें मनमोहन सिंह, मोंटेक सिंह आहलूवालिया, पी.सी. एलेक्जेण्डर, आबिद हुसैन, एम नरसिम्हन,, एल के झा, प्रणव मुखर्जी, नरसिम्हा राव, आदि इंदिरागांधी के समय में सलाहकार हुआ करते थे। और पी. चिदम्बरम को तो राजीव गांधी ने वाणिज्य मंत्रालय में राज्य मंत्री बनाया था। 1991 के बाद इनके द्वारा निभायी गयी भूमिका से तो सभी परिचित हैं ही। कुछ तो आज भी अपनी भूमिका बखूबी निभा रहे हैं।

इन थोड़े से ही उदाहरणों से हम जान सकते हैं कि किस तरह से 1991 के पहले वाला समय भी दरअसल पूंजीपति वर्ग का ही शासन काल था। जिसमें उसको फलने-फूलने का मौका दिया गया और फ़िर अवसर आते ही सबकुछ उसके हवाले किया जाने लगा। और मध्यम वर्ग को भी इसमें अपनी तरफ मिलाने के लिये उसने मध्यम वर्ग को उपभोक्ता सामग्री के समुद्र में तैरने के लिए छोड़ दिया जहां तक अंतहीन किनारा था। और एक बहुसंख्यक मेहनतकश आबादी का निर्मम शोषण व लूट जारी रही। जो आज भी जारी है। हमें किसी भी तरह की गलतफहमी को न पालते हुए यह साफ़ तौर पर समझना चाहिए कि नेहरू, इंदिरा, राजीव गांधी से लेकर अटल बिहारी वाजपेयी, मनमोहन सिंह का शासन एक पूंजीवादी शासन है और आगे जो भी व्यक्ति लोकसभा के चुनाव के बाद प्रधानमंत्री बनेगा वह पूंजीपति वर्ग का ही आदमी होगा। अगर व्यवस्था परिवर्तन करना है तो देश की खेत-खलिहानों, फैक्टरियों-खानों में काम करने वाली मेहनतकश आबादी को संगठित कर पूंजीवादी शासन के विरुद्ध बिगुल फूंकना पड़ेगा।

# मीडिया और विज्ञान का भगवाकरण

-अतुल आनंद

**''मैं अपने धर्म की शपथ लेता हूं, मैं इसके लिये अपनी जान दे दूंगा। लेकिन यह मेरा व्यक्तिगत मामला है। राज्य का इससे कुछ लेना-देना नहीं। राज्य का काम धर्मनिरपेक्ष कल्याण, स्वास्थ्य, संचार,आदि मामलों का खयाल रखना है, न कि तुम्हारे और मेरे धर्म का।''**

**-महात्मा गांधी**

भारत एक धर्म निरपेक्ष देश है, ऐसा हमारे संविधान में कहा गया है। संक्षेप में कहें तो धर्मनिरपेक्षता का अर्थ होता है धर्म का राज्य से अलग होना। कई बार इस धर्मनिरपेक्षता शब्द का कोई अर्थ नहीं रह जाता है जब राष्ट्रीयता, मीडिया और विज्ञान के मामलों में देश के बहुसंख्यक धर्म का विशेष खयाल रखा जाता है। आज से लगभग दस साल पहले भाजपा के शासन वाली सरकार में एनसीआरटी की इतिहास की किताबों से छेड़छाड़ कर उनका भगवाकरण करने की कोशिश की गयी थी जिसका देश भर के शिक्षाविदों और बुद्धिजीवियों ने विरोध किया था। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय को भी हस्तक्षेप करना पड़ा था। समय के साथ दक्षिणपंथी समूहों और उनके ''इतिहासकारों'' व बुद्धिजीवियों द्वारा हिंदुत्व का प्रचार और भगवाकरण करने की कोशिशें बढी हैं।

भारत माता, जो एक हिन्दू देवी दुर्गा का प्रतिरूप लगती है, को दक्षिणपंथी समूहों ने एक ''राष्ट्रीय'' प्रतीक के रूप में लगभग स्थापित कर लिया है। भारत माता गौरवर्णा है। भारत माता का रंग-रूप से लेकर उनका पहनावा तक एक हिन्दू देवी की तरह है, जो आधे से अधिक भारतीय महिलाओं के रंग-रूप और पहनावे सें मेल नहीं खाता। वह दुर्गा की तरह शेर पर सवार है। दिलचस्प बात यह है कि देश का एक प्रमुख दक्षिणपंथी संगठन भारत माता की इस छवि को अपने प्रतीक के रूप में इस्तेमाल करता आया है। भारत माता की जय के नारे हिन्दू संगठनों के कार्यक्रमों से लेकर भारतीय सेना में समान रूप से गूंजते है।

मीडिया का जितना कवरेज हिन्दू धर्म के पर्व-त्योहारों को मिलता है, उतना कवरेज दूसरे धर्मों के पर्व-त्योहारों को शायद ही नसीब होता है। हिन्दू पर्व-त्योहारों के समय प्रमुख हिंदी अखबार अपने 'मास्टरहेड' को उन पर्व-त्योहारों के रंग से रंग देते हैं। त्योहारों के विशेष पृष्ठों और खबरों से अखबारों को भर दिया जाता है। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया भी बहुसंख्यक धर्म के त्योहारों में पूरी तरह डूब जाती है। वैसे भारतीय मीडिया सालभर हिंदू धर्मग्रंथों के पात्रों और मिथकों को उद्धृत करती रहती है। भीम जैसे धार्मिक पात्रों को लेकर कार्टून-शो बनाए जाते हैं। हिंदी फिल्मों के नायक भी अधिकतर हिंदू पात्र ही होते हैं, भले ही उस पात्र को निभाने वाले अभिनेता किसी दूसरे धर्म के हों। हाल ही में इतिहास से छेड़छाड़ का एक और उदाहरण देखने को मिला। टीवी पर शुरू हुए एक नये ''ऐतिहासिक'' कार्यक्रम में जानबूझकर अकबर को एक मुस्लिम आक्रान्ता और खलनायक के रूप में दिखाने की कोशिश की गयी है। यह अकबर जैसे उदारवादी और धर्मनिरपेक्ष शासक का गलत चित्रण कर नयी पीढी को भ्रमित करने की कोशिश है।

दूसरी तरफ़ हमारे शासक वर्ग ने (खासकर भाजपा के शासन-काल के दौरान) विज्ञान, स्वदेशी तकनीक और आविष्कारों को हिन्दू धर्म के प्रचार-प्रसार का साधन बना दिया। भारत में विकसित तकनीकों और मिसाइलों का नामकरण हिन्दू मिथकों और पात्रों के नाम पर किया जाने लगा। ''अग्नि'', ''इंद्र'', ''त्रिशूल'' ''वज्र'', ''ब्रह्मोस'' ''पुष्पक'' आदि इसके उदाहरण हैं। दिलचस्प बात यह है कि हिन्दू मिथकों के नाम पर रखे गये इन मिसाइलों के विकास और निर्माण में महत्त्वपूर्ण योगदान देने वाले 'मिसाइलमैन' डॉ. कलाम एक अल्पसंख्यक समुदाय से हैं।

इतना ही नहीं, खेल के क्षेत्र में मिलने वाले पुरस्कारों के नाम ''अर्जुन'', ''द्रोणाचार्य'' आदि भी हिन्दू धर्मग्रंथों से लिये गये हैं। मध्यप्रदेश में ''गौ-रक्षा कानून'' जैसे अनूठे कानून लागू हैं। अब वहां निचली कक्षा के बच्चों को स्कूलों, मिशिनरियों और मदरसों में गीता पढाये जाने की कोशिश की जा रही है। यहां यह सवाल उठाना बेकार है कि यह कृपा सिर्फ हिन्दू धर्मग्रंथों पर ही क्यों की जा रही है? ईसाई और मुस्लिम धर्म के धर्मग्रंथों पर यह कृपा क्यों नहीं की जा रही? जब नरेन्द्र मोदी खुद के हिन्दू राष्ट्रवादी होने की घोषणा करते हैं तो हम भारतीयों को आश्चर्य नहीं होता क्योंकि यह देश तो पहले ही आधे हिन्दू-राष्ट्र में बदल चुका है। सावरकर और गोलवकर के ''हिन्दू-राष्ट्र'' की संकल्पना को यथार्थ में बदलने की पूरी कोशिश की जा रही है।

दुर्भाग्य है कि बुद्धिजीवियों और वैज्ञानिकों का एक वर्ग आधे-अधूरे और बेबुनियाद तथ्यों के आधार पर हिन्दू मिथकों को स्थापित करने और हिंदुत्व का प्रचार-प्रसार करने का प्रयास कर रहा है। हाल ही में मीडिया और विज्ञान के भगवाकरण का एक बेमिसाल उदाहरण देखने को मिला। दिनांक 29-07-2013, सोमवार के दैनिक भास्कर, झारखंड संस्करण में पृष्ठ संख्या 12 को 'सोमवारी' विशेष बना दिया गया था। दूसरे पृष्ठों पर भी श्रावण महीने में शिव आराधना और सोमवारी से जुड़ी खबरें हैं, लेकिन इस विशेष पृष्ठ पर ''विशेषज्ञ'' शिव और शिव-आराधना के महत्त्व का बखान कर रहे हैं। ''एक विशेषज्ञ'' जहां शिव की उपासना विधि बता रहे है वहीं दूसरी तरफ एक दूसरे विशेषज्ञ यह दावा कर रहे हैं कि ''शिवजी की उपासना से अपमृत्यु योग से मिल सकता है छुटकारा''। इस तरह के विशेष पृष्ठ और विशेषज्ञ विश्लेषण दूसरे धर्मों के त्योहारों के लिये नहीं दिखते हैं।

सबसे दिलचस्प लेख तो इस पृष्ठ के निचले भाग पर 'एक वैज्ञानिक विश्लेषण' के रूप में है। शायद अखबार ने दूसरे लेखों की अवैज्ञानिकता को संतुलित करने के लिये इस ''वैज्ञानिक विश्लेषण'' को जगह दी है। हालांकि यह लेख भी दूसरे लेखों की ही तरह अवैज्ञानिक है। इस लेख का शीर्षक है ''न्यूक्लियर रिएक्टर की बनावट है शिवलिंग जैसी''। आश्चर्य नहीं कि इस तरह के बेसिरपैर की खबरों के कारण हिंदी मीडिया की यह दुर्गति हुई है। इस लेख को लिखने वाले रांची के एक जाने माने भूवैज्ञानिक डॉ. नीतीश प्रियदर्शी हैं। उन्होंने शिवलिंग और परमाणु संयंत्र में समानता स्थापित करने के लिए अजीबोगरीब तथ्य दिये हैं। जैसे कि परमाणु संयंत्र और शिवलिंग की संरचना बेलने की तरह होती है। यह साबित करने के लिये लेखक ने भाभा परमाणु संयंत्र का उदाहरण दिया है।

इससे यह साबित नहीं हो जाता कि परमाणु संयंत्रों का शिवलिंग से कोई रिश्ता है। अगर ऐसा होता तो परमाणु संयंत्र का आविष्कार विदेश की जगह भारत में किसी शिवभक्त ने किया होता। ऐसे कामचलाऊ विश्लेषण को वैज्ञानिक विष्लेषण बोल कर आप खुद अपनी फजीहत करवा रहे हैं। लेखक आगे कहते हैं कि नाभिकीय संयंत्र में भी जल का प्रयोग किया जाता है और शिवलिंग पर भी जल प्रवाहित की जाती है। नाभिकीय संयंत्र में जल का प्रयोग नाभिकीय छड़ों को ठंडा करने के लिए किया जाता है। वहीं शिवलिंग पर जल के अलावा दूध भी डाला जाता है, लेकिन ये सब शिवलिंग को ठंडा करने के लिये तो नहीं किया जाता। लेखक महोदय भी ऐसा कोई दावा करते नज़र नहीं आते।

यह लेख बेबुनियाद तथ्यों और सुनी-सुनाई बातों पर आधारित है, जिसका एक ही उद्देश्य है-हिंदू धर्म और इसके ''इतिहास'' की श्रेष्ठता को साबित करना। लेखक 'स्यामंतक' नाम के किसी ''रेडियोएक्टिव'' पत्थर का जिक्र भी करते हैं जो सोमनाथ मंदिर में हुआ करता था। लेखक ने यह बताने की जरूरत नहीं समझी कि उस 'रेडियोएक्टिव' पत्थर के संपर्क में आने वाले लोग कैंसर का शिकार होकर मरे थे या नहीं?

डॉ. नीतीश प्रियदर्शी के ब्लॉग पर और भी दिलचस्प चीजें मिलती हैं। इस लेख के अखबार में छपने के दिन ही डॉ. नीतीश प्रियदर्शी अपने ब्लॉग पर एक स्लाइड शो डालते हैं। प्राचीन ''भारतीय'' संस्कृति में नाभिकीय हथियारों के प्रयोग पर उनके शोध पर आधारित लगभग तेरह मिनट की इस स्लाइड शो का नाम है ''डिड इंडिया हैव द एटॉमिक पॉवर इन एन्शिएन्ट डेज?'' (क्या भारत के पास प्राचीन काल में परमाणु शक्ति थी?)। अपने शोध से वह यह निष्कर्ष निकालते हैं कि महाभारत के युद्ध में नाभिकीय हथियारों का प्रयोग हुआ था। वह अपने इस स्लाइड शो की शुरूआत कर्णाद द्वारा अणु के अस्तित्व को लेकर खोज से करते हैं। इस स्लाइड शो में वह हिन्दू धर्मग्रंथों से ऐसे हथियारों के उदाहरण देते हैं जिसका नाभिकीय हथियारों से कोई सम्बंध नहीं दिखता। जैसे राम द्वारा शिव का धनुष तोड़ा जाना, मोहनास्त्र, आग्नेयास्त्र, ब्रह्मास्त्र, पाशुपतास्त्र, इंद्र का वज्र आदि।

इस स्लाइड शो में पौराणिक कथाओं के नागास्त्र, जिसके प्रयोग से नागों की बारिश होती थी, के जैविक हथियार होने की सम्भावना व्यक्त की गयी है। डॉ. नीतीश प्रियदर्शी यहां हिन्दू संस्कृति की महानता और श्रेष्ठता सिद्ध करने के चक्कर में कुछ जरूरी सवालों का जवाब देना भूल जाते हैं। क्या इन अस्त्रों में नाभिकीय पदार्थों का प्रयोग हुआ था? सिर्फ कुछ मंत्रों के सहारे आप नाभिकीय अस्त्र कैसे बना सकते हैं? अगर महाभारत के युद्ध में नाभिकीय हथियारों का प्रयोग हुआ भी था तो पांडव और दूसरे लोग जीवित कैसे बच गए? अगर कोई जीवित बचा भी तो विकिरण का प्रभाव आने वाली पीढियों पर रहता, कई तरह की अनुवांशिक बीमारियां और विकृतियां होती। जिस कुरुक्षेत्र में इन नाभिकीय हथियारों का इस्तेमाल हुआ था, वह जगह रहने लायक नहीं रहती, विकिरण का प्रभाव हजारों साल तक रहता है। इन ग्रंथों में परमाणु हथियार या परमाणु संयंत्र बनाने की विधि लिखी होनी चाहिए थी।

अपने इस शोध में डॉ. नीतीश प्रियदर्शी ने हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की संस्कृति को भी नहीं छोड़ा है जिनका हिन्दू सभ्यता-संस्कृति से कोई रिश्ता नहीं है। इस स्लाइड शो के अंत में डॉ. नीतीश प्रियदर्शी अपने इस शोध की जिम्मेदारियों से खुद को बचाते हुए नजर आते हैं। वह बड़ी चालाकी से यह कह कर निकल जाते हैं कि इस शोध से उन्होंने कुछ साबित करने को कोशिश नहीं की है, यह शोध उन्होंने कुछ इंटरनेट वेबसाइटों और किताबों की मदद से किया है। हालाँकि वह उन इंटरनेट वेबसाइटों और किताबों का कोई संदर्भ नहीं देते है। डॉ. नीतीश प्रियदर्शी इन धर्मग्रंथों का वैज्ञानिक और तार्किक विश्लेषण करने की जगह इनका महिमामंडन करते दिखते हैं।

डॉ. नीतीश प्रियदर्शी अपने एक दूसरे हालिया ''शोध'' में झारखंड में आदिवासी गांवों में राम-लक्षमण के ''पद-चिन्ह'' खोज रहे हैं, जिसकी खबर झारखंड के एक अंग्रेजी अखबार ने छापी है। उनके इस ''शोध'' का तरीका भी हिन्दू धर्मग्रन्थों के अध्ययन तक सीमित है। इस ''शोध'' में वह गांव में प्रचलित महाभारत और रामायण से जुड़ी किंवदंतियों का जिक्र भी करते हैं। यहां पेंच यह है कि आदिवासियों के खुद के आदि-धर्म हैं, उनका हिन्दू धर्म से कोई लेना-देना नहीं, तो फिर ये महाभारत और रामायण की किंवदंतियां कहां से आयी? इस बाबत जब डॉ. नीतीश प्रियदर्शी से सवाल किया गया तो उन्होंने कहा कि वह भूवैज्ञानिक हैं और वहां पत्थरों और ''पद-चिन्हों'' पर शोध करने गये थे, उन्होंने गांव वालों से ज्यादा बात-चीत नहीं की।

''अल्पसंख्यक तुष्टिकरण'' जैसे जुमलों को उछालने वाले यह आसानी से भूल जाते हैं कि इस देश में बहुसंख्यक धर्म का तुष्टिकरण कैसे कई स्तरों पर होता रहता है। इस मामले में मीडिया, बुद्धिजीवी, प्रशासन मिलकर अपनी-अपनी भूमिका निभाते ही हैं, लेकिन कई बार अदालतें भी हिन्दू मिथकों के आधार पर फैसलें सुनाती है।